THE ECONOMIC TIMES

Date: 07-05-18

Some Good work by GST Council, Some Bad

Editorial

The Goods and Services Tax (GST) Council has done well to clear a simple filing system for businesses to claim input tax credit. Phasing in filing a single monthly return for all taxpayers, except composition dealers and dealers filing nil returns, who would file a quarterly return, makes eminent sense. Ditto for mandating only B2B dealers to file invoice-wise returns of outward supplies. A simplified, non-obtrusive and administratively efficient system of matching returns and invoices will make compliance easy. The resulting audit trails of value addition across the income and production chain will curb evasion, and shore up collections.

The decision to make the GST Network (GSTN) wholly government-owned is strange. Non-government entities had been given 51% ownership of this company that runs the information technology infrastructure because state ownership comes with cumbersome rules and procedures that would impede swift decisionmaking and action, essential if the infrastructure is to run flawlessly all the time. Has the government taken action, no doubt desirable, to make all state-owned enterprises as nimble as private sector ones, in hiring and procurement? If not, how will GSTN ensure functional excellence? Is the government aware that the dematerialised accounts that hold India Inc.'s ownership instruments are housed in non-state entities? Do our politicians want to tell the outside world that it should not trust India's IT giants with its sensitive data—after all, these are non-state entities?

The proposal for a sugar cess is absurd and surrender before populist pressure. The way to end farmer distress is to implement the Rangarajan committee's recommendation to pay farmers a price that varies in direct proportion to the sugar industry's profits.

जागरण

Date: 07-05-18

कैंसर की तरह फैलता अवैध निर्माण

संजय गुप्त, (लेखक दैनिक जागरण समूह के सीईओ व प्रधान संपादक हैं)

हिमाचल प्रदेश के कसौली में एक होटल मालिक ने अवैध निर्माण हटाने आईं सहायक नगर नियोजन अधिकारी शैलबाला की जिस तरह गोली मारकर हत्या कर दी, वह अपराध की सामान्य घटना नहीं है। शैलबाला को गोली मारने वाले होटल मालिक ने पहले ले-देकर अपने अवैध निर्माण को बचाने की कोशिश की। जब वह नाकाम रहा तो उसने पुलिस की मौजूदगी में सहायक नगर नियोजन अधिकारी की हत्या कर दी। यह घटना इसलिए कहीं अधिक गंभीर है, क्योंकि अवैध निर्माण हटाने की कार्रवाई सुप्रीम कोर्ट के आदेश के तहत हो रही थी। इस महिला अधिकारी की शहादत के बावजूद इसके आसार कम हैं कि देश में कैंसर की तरह बढ़ते अवैध निर्माण की समस्या पर नौकरशाहों और नेताओं की नींद खुलेगी। आज देश का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं, चाहे वह गांव हो या देश की राजधानी दिल्ली, जहां किसी तरह का अवैध या अनियोजित निर्माण न हुआ हो। पहले सरकारी जमीनें ही अवैध कब्जे और निर्माण की भेंट चढ़ती थीं, लेकिन अब निजी जमीनों पर भी अतिक्रमण के मामले बढ़ते जा रहे हैं।

सरकारी अथवा गैरसरकारी जमीन पर अवैध निर्माण और अनियोजित विकास को रोकने की जिम्मेदारी स्थानीय निकायों, प्रशासन और अंतत: राज्य सरकारों की है। यदा-कदा स्थानीय निकायों अथवा जिला प्रशासन के अधिकारी स्थायी-अस्थायी अवैध निर्माण को बुलडोजर लेकर गिरा देते हैं, लेकिन कुछ समय बाद फिर से पहले वाली स्थिति हो जाती है। कई बार तो दो-तीन दिन में ही अतिक्रमणकारी लौट आते हैं या फिर रोका गया अवैध निर्माण पुन: शुरू हो जाता है। इसी तरह सरकारी जमीनों से हटाई गई झुग्गियां फिर से खड़ी होने लगती हैं। कभी-कभी तो इन झुग्गियों को बसाने के लिए नेतागीरी भी होने लगती है। धीरे-धीरे ये झुग्गियां बस्ती का रूप ले लेती हैं और फिर वहां नागरिक सुविधाएं प्रदान करने की मांग होने लगती है। जल्द ही ऐसी बस्तियों को नियमित करने की जरूरत जताई जाने लगती है, क्योंकि इन बस्तियों में रहने वाले किसी नेता के वोटर बन जाते हैं। देरसबेर इन बस्तियों को नियमित भी कर दिया जाता है, जबकि वे बेतरतीब और अनियोजित विकास का नमूना होती हैं।

झुग्गी बस्तियों को नियमित करते समय न तो नागरिक सुविधाओं की उपलब्धता की चिंता की जाती है और न ही पर्यावरण की। इसके चलते गंदगी, प्रदूषण और यातायात जाम जैसी समस्याएं सिर उठा लेती हैं। आज शहरी जीवन कहीं अधिक समस्याओं से घिरा और सेहत के लिए हानिकारक होता जा रहा है। शहरी जीवन का चुनौतीपूर्ण होते जाना खतरे की घंटी है, लेकिन लगता है कि किसी को भी यह घंटी सुनाई नहीं दे रही है। समझना कठिन है कि नगर नियोजन का काम देखने वाले अथवा मास्टर प्लान बनाने और उसे लागू करने वाले क्या सोचकर अनियोजित विकास और अवैध निर्माण की अनदेखी करते हैं? भारत एक विकासशील देश है और यह माना जा रहा है कि अगले दो-तीन दशकों में देश की करीब आधी आबादी शहरों में निवास करेगी। इसे देखते हुए जब शहरीकरण के मानकों पर सख्ती से पालन होना चाहिए तब ठीक इसके उलट हो रहा है। सड़कें, फुटपाथ और पार्क अतिक्रमण का शिकार हो रहे हैं, फिर भी कोई नहीं चेतता। अगर कभी कोई चेतता है तो हाईकोर्ट या फिर सुप्रीम कोर्ट। दिल्ली में सुप्रीम कोर्ट के आदेश पर व्यावसायिक स्थलों की सीलिंग का सिलसिला इसी कारण कायम है, क्योंकि नगर निगम और दिल्ली विकास प्राधिकरण जैसी संस्थाओं ने नियोजित विकास पर कभी ध्यान नहीं दिया। हालांकि कई एनजीओ एवं अन्य नागरिक संगठन पर्यावरण बचाने को लेकर सक्रिय हैं और वे अनियोजित विकास के मसले उठाते रहते हैं, लेकिन अधिकारी और नेता मुश्किल से ही उनकी सुनते हैं। वे तभी हरकत में आते हैं, जब अदालत कोई आदेश देती है। इस पर भी उनकी पहली कोशिश अदालती आदेश की खानापूरी करने की अधिक होती है।

बात चाहे दिल्ली जैसे महानगरों की हो या फिर कसौली सरीखे पर्वतीय स्थलों की, यहां अवैध निर्माण रातोंरात नहीं हुए। दरअसल समस्या यह है कि जब अवैध निर्माण या फिर नियम विरुद्ध विकास हो रहा होता है तो संबंधित विभागों के अधिकारी उससे आंखें मूंदे रहते हैं। सुप्रीम कोर्ट ने यह पाया था कि कसौली में करीब एक दर्जन होटलों ने अवैध निर्माण कर रखा है। आखिर जब इस अवैध निर्माण की पहली ईंट रखी जा रही थी, तो नगर नियोजन या लोक निर्माण विभाग क्या कर रहा था? यदि तभी उसे रोक दिया गया होता तो सहायक नगर नियोजन अधिकारी की जान नहीं जाती। इसी तरह यदि दिल्ली में मकानों में दुकानें और शोरूम बनते समय उन्हें रोक दिया गया होता तो न सीलिंग की नौबत आती और न ही कारोबारियों की ओर से यह शिकायत सुनने को मिलती कि हमारी रोजी-रोटी की परवाह नहीं की जा रही या फिर हम तो कहीं के नहीं रहे।

हमारे शहर तो कंक्रीट के जंगल हैं ही, अब पहाड़ी इलाकों में अवैध निर्माण के रूप में भी कंक्रीट के जंगल खड़े हो रहे हैं। वे पहाड़ों के सौंदर्य को नष्ट करने के साथ पर्यावरण को भी नुकसान पहुंचा रहे हैं। हमारे पर्वतीय स्थल दुनिया के अन्य पर्वतीय स्थलों के मुकाबले बदसूरत होते जा रहे हैं, तो इसका एक बड़ा कारण भ्रष्टाचार के बल पर होने वाला अवैध निर्माण ही है। इसी भ्रष्टाचार के कारण फुटपाथ और पार्क अतिक्रमण का शिकार हो रहे हैं। पुलिस या स्थानीय निकायों के अफसर फुटपाथ पर रेहड़ी-खोमचा लगाने वालों से केवल वसूली के चक्कर में रहते हैं। अवैध निर्माण का धंधा सड़कों से लेकर पार्कों तक और झुग्गी-बस्तियों से लेकर बहुमंजिला इमारतों तक फैल गया है। किसी एक क्षेत्रफल में कितने घर, व्यावसायिक स्थल या फिर बहुमंजिला इमारतें बन सकती हैं और वे कितनी ऊंची हों, इस सबके मानक होते हैं, लेकिन शायद ही कभी उनका पालन होता हो। जब किसी इलाके में कुछ लोग रिश्वत के बल पर मनमाने तरीके से अवैध निर्माण करते हैं तो नियम-कानूनों के हिसाब से चलने वाले अपने को ठगा हुआ महसूस करते हैं। अगर अवैध निर्माण, अनियोजित विकास, अतिक्रमण आदि के बदले बड़े पैमाने पर होने वाली रिश्वतखोरी का कोई आकलन किया जा सके तो शायद यही सामने आए कि यह भ्रष्टाचार का सबसे बड़ा स्रोत है।

अपने देश में जिस तरह हर तरफ अवैध निर्माण हो रहा है, उससे यह नहीं लगता कि हम विकसित देश बनने के लक्ष्य को हासिल कर पाएंगे। आज आर्थिक तरक्की के मामले में भारत से कहीं पीछे खड़े देश शहरीकरण और नगर नियोजन के मामले में बेहतर स्थिति में हैं। वहां के गांवों और शहरों की व्यवस्था देखकर यही लगता है कि भारत में कोई इसकी परवाह नहीं कर रहा कि विकास और निर्माण का हर काम नियम-कानूनों के हिसाब से होना चाहिए। इसी कारण हमारे छोटे-बड़े शहर बदरंग और बदहाल होते जा रहे हैं। चूंकि पक्ष-विपक्ष के राजनीतिक दलों के एजेंडे में सुनियोजित विकास है ही नहीं, इसलिए अवैध निर्माण के खिलाफ अदालती आदेशों पर पालन के साथ यह भी जरूरी है कि अनियोजित विकास के लिए जिम्मेदार अधिकारियों को दंडित किया जाए। इसके लिए आवश्यक हो तो नियम-कानूनों में तब्दीली भी की जानी चाहिए।

Date: 06-05-18

सीमाओं पर देश प्रेम का जज्बा न हो तो शत्रु से लड़ना काफी मुश्किल

डॉ. एके वर्मा, (लेखक राजनीतिक विश्लेषक एवं सेंटर फॉर द स्टडी ऑफ सोसायटी एंड पॉलिटिक्स के निदेशक हैं)

हाल के समय में पूर्वोत्तर भारत की राजनीति में जबरदस्त बदलाव आया है। यह बदलाव केवल इस रूप में ही नहीं है कि जहां कभी भाजपा का खाता भी नहीं खुलता था और उसे मात्र एक-डेढ़ फीसद वोट मिलते थे वहां कई राज्यों में आज उसकी सरकारें हैं, बल्कि आर्थिक एवं सामाजिक बदलाव के रूप में भी है। पूर्वोत्तर देश के लिए सामरिक दृष्टि से बहुत संवेदनशील है, क्योंकि इसकेसभी आठ राज्यों अरुणाचल, असम, नगालैंड, मणिपुर, मिजोरम, त्रिपुरा, मेघालय और सिक्किम की 90 प्रतिशत से अधिक सीमा अंतरराष्ट्रीय है, जो चीन, बांग्लादेश, म्यांमार, भूटान और नेपाल से लगती है। पिछली सरकारों ने इस क्षेत्र के विकास और देश की प्रतिरक्षा में कोई तालमेल बैठाने का काम नहीं किया। इससे न केवल पूर्वोत्तर के लोगों में भारतीय अस्मिता को लेकर संवेदनहीनता रही, वरन विदेशी ताकतों, खासकर चीन को उन्हें भारत के विरुद्ध भड़काने का एक आधार मिल गया।

1962 के बाद ज्यादातर सरकारें चीन के सामरिक दबाव में रहीं और उन्होंने दक्षिणी पूर्वी एशिया (आसियान) के देशों को कोई विशेष तवज्जो भी नहीं दी। रही-सही कसर ईसाई मिशनरियों ने धर्मांतरण द्वारा पूरी कर दी। 2011 की जनगणना के अनुसार नगालैंड 88 प्रतिशत, मिजोरम 87 प्रतिशत, मेघालय 74 प्रतिशत, मणिपुर 41 प्रतिशत और अरुणाचल 30 प्रतिशत ईसाई जनसंख्या वाले राज्य बन गए जबकि 1911 की जनगणना में ईसाइयों की जनसंख्या इन राज्यों में शून्य से तीन प्रतिशत मात्र थी। कांग्रेस ने भाजपा को सांप्रदायिक घोषित कर और स्वयं को अल्पसंख्यकों के मसीहा के रूप में पेश कर इसका लाभ उठाया। इससे पूर्वोत्तर में काफी समय तक उसका दबदबा बना रहा, लेकिन भाजपा और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने भी पूर्वोत्तर में आदिवासियों के बीच 'वनवासी कल्याण आश्रम' के माध्यम से काम कर न केवल लालच और दबाव द्वारा किए जाने वाले धर्मांतरण पर ब्रेक लगाया वरन आदिवासियों को अपनी संस्कृति और धर्म के मार्ग पर डटे रहने का साहस भी दिया। तो क्या पूर्वोत्तर का भगवाकरण हो रहा है? यह ठीक है कि भाजपा पूर्वोत्तर के अनेक राज्यों में सरकार बनाने में सफल रही है, लेकिन अभी यह नहीं कहा जा सकता कि ऐसा इसलिए हुआ, क्योंकि पूर्वोत्तर की जनता ने भाजपा की दक्षिणपंथी विचारधारा को स्वीकार कर लिया है। तो फिर हाल के चुनावों में भाजपा की राजनीतिक बढ़त को कैसे देखा जाए? भाजपा ने असम, त्रिपुरा और अरुणाचल में अपने बलबूते और मेघालय, नगालैंड और मणिपुर में अपने सहयोगी दलों के साथ सरकारें बना ली हैं।

असम और त्रिपुरा में तो भाजपा को स्पष्ट जनादेश मिला। असम में उसने कांग्रेस और त्रिपुरा में वाम दलों की सरकार को विस्थापित किया। असम और त्रिपुरा में क्रमश: कांग्रेस और वामपंथी दलों का जनाधार कम नहीं हुआ, पर इन राज्यों में भाजपा के जनाधार में अप्रत्याशित वृद्धि हुई। निष्कर्षत: इन राज्यों के साथ पूर्वोत्तर के अन्य राज्यों में वामपंथ (कम्युनिस्ट), मध्यमार्गी वामपंथ (कांग्रेस) और क्षेत्रीय विचारधाराओं के साथ-साथ दक्षिणपंथ (भाजपा) को भी राजनीतिक 'स्पेस' मिल गया है। इसे हम पूर्वोत्तर में 'विचारधारामूलक स्पर्धाओं का लोकतंत्रीकरण' कह सकते हैं, क्योंकि अब वहां राजनीतिक स्पर्धा में उस दक्षिणपंथी विचारधारा को भी स्थान मिल गया जो पहले बहिष्कृत थी।

क्या पूर्वोत्तर में भाजपा की उपस्थिति जनादेश पर आधारित है या उसे केवल रणनीतिक उपस्थिति माना जा सकता है? जनादेश और रणनीतियां परस्पर स्वायत्त विधाएं नहीं, वरन अनुपूरक हैं। जनादेश हेतु राजनीतिक स्पर्धाएं बिना रणनीति के संभव नहीं। हम राजनीतिक दलों की रणनीतियों की समीक्षा उचित-अनुचित के रूप में कर सकते हैं, लेकिन इसकी अनदेखी नहीं कर सकते कि भाजपा ने पूर्वोत्तर में अपनी पैठ बनाने के लिए कई सफल रणनीतियां बनाईं। आम जनता

खास तौर से आदिवासियों से जुड़ना उसकी पहली रणनीति रही। क्षेत्रीय राजनीतिक दलों को साधना उसकी दूसरी रणनीति थी। इसके लिए उसने 2016 में राजग की तर्ज पर 'नार्थ ईस्ट डेमोक्रेटिक एलायंस' यानी नेडा बनाया जिसमें नगा पीपुल्स फ्रंट, सिक्किम डेमोक्रेटिक एलायंस और असम गण परिषद आदि क्षेत्रीय दलों को सम्मिलित किया। इससे ही उसे स्थानीय समर्थन मिल सका। तीसरी रणनीति के रूप में उसने पूर्वोत्तर के महत्वपूर्ण नेताओं को भाजपा में शामिल किया।

चूंकि चुनावी रणनीतियां राजनीतिक लक्ष्यों को ही प्राप्त करने के लिए होती हैं इसलिए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का राजनीतिक लक्ष्य 'भाजपा सिस्टम' की स्थापना है जिसे वह 'कांग्रेस मुक्त भारत' की अवधारणा से व्यक्त करते हैं। स्वतंत्रता के बाद देश में 'कांग्रेस सिस्टम' स्थापित हो गया था जिसमें केंद्र और राज्यों में कांग्रेसी सरकारों का वर्चस्व रहा। गांधी जी इसके खिलाफ थे। उन्होंने कांग्रेस को भंग कर उसे 'लोक सेवक संघ' में बदलने की वकालत की, जिसे नेहरू और पटेल ने स्वीकार नहीं किया। आज कांग्रेस केवल पंजाब, कर्नाटक और मिजोरम में सिमट कर रह गई है जबकि भाजपा करीब 20 राज्यों में सत्ता में है। ऐसा इसलिए हुआ, क्योंकि कांग्रेस ने उस भारतीयता की उपेक्षा की जिसे गांधी, टैगोर, महर्षि अरविंद, विवेकानंद, राधाकृष्णन और लोहिया जैसे

विद्वानों ने आगे बढ़ाने की कोशिश की। पूर्वोत्तर के राज्य इसके गंभीर शिकार हो गए और वहां स्थानिकता हावी हो गई। यह देश की सुरक्षा के लिए गंभीर चुनौती बन गई, क्योंकि यदि सीमाओं पर देश प्रेम का जज्बा न हो तो शत्रु से लड़ना मुश्किल हो जाता है। इसी कमी को पूरा करने के लिए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने एक तरह की 'थ्री डी पॉलिटिक्स' की रणनीति पूर्वोत्तर में लागू की।

इसका अर्थ है डेवलपमेंट यानी विकास, डिफेंस यानी प्रतिरक्षा और डेमोक्रेसी यानी लोकतंत्र को जोड़कर मजबूत और समृद्ध भारत की कल्पना करना। मोदी ने पूर्वोत्तर को 'आसियान' देशों से जोड़ने वाले 'एक्सप्रेस कॉरीडोर' के रूप में देखा और वहां रेल, सड़क और वायु मार्गों के विकास एवं बिजली उत्पादन को वरीयता देकर विकास को प्राथमिकता दी। पूर्वोत्तर का विकास देश की प्रतिरक्षा से भी जुड़ता है। जिस तरह चीन 'वन-बेल्ट, वन-रोड' परियोजना से भारत को घेरने की कोशिश कर रहा है उसकी काट के लिए मोदी ने 'स्ट्रिंग ऑफ पर्ल' की जवाबी रणनीति बनाई है और उसके लिए 'लुक ईस्ट' से आगे 'एक्ट ईस्ट' की नीति अपनाई है। इसमें विकास के साथ-साथ प्रतिरक्षा का भी समन्वय है। विकास और प्रतिरक्षा की सार्थकता के लिए लोकतंत्र अर्थात जनता की सहभागिता जरूरी है। पूर्वोत्तर के चुनावों ने मोदी की इस रणनीति को संजीवनी दी है। वहां के लोगों ने नरेंद्र मोदी के विकास मॉडल की हकीकत समझी और जनता, राजनीतिक दलों और क्षेत्रीय नेताओं ने भाजपा का समर्थन किया। यदि भाजपा पूर्वोत्तर भारत में विकास को जमीन पर उतार सकी तो पूर्वोत्तर में दक्षिणपंथी विचारधारा भी अपना स्थान बना सकेगी।